INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS

Volume 3, Issue 6, June 2015 ISSN: 2320-2882 (Online)

ORIGINAL ARTICLE

Impact Factor: 0.345(GIF)

www.ijcrt.net

अतीन्द्रिय क्षमताएँ एवं यौगिक सिद्धियाँ

डॉ0 गोविन्द प्रसाद मिश्र

असि0 प्रोफेसर–दर्शन शास्त्र विभाग

पतंजलि विश्वविद्यालय हरिद्वार

मेल–drgovindmishra@gmail.com

शोध आलेख सार

ज्ञान एवं कर्म के साधनों को 'इन्द्रियाँ' कहते हैं। शब्द व्युत्पत्ति की दृष्टि से इन्द्रिय शब्द का अर्थ होता है–आत्मा का ज्ञापक, शक्ति या योग्यता–क्षमता। 'इन्द्रस्य आत्मनः लिङ्गम ज्ञापकम् इति इन्द्रियम्'। सांख्य प्रवचन भाष्य मे विज्ञानभिक्षु ने इन्द्रियों को शरीर के स्वामी आत्मा का साधन कहा है।[1]

इन्द्रियों के माध्यम से ही हम ज्ञान प्राप्त करने एवं कोई भी कर्म करने मे समर्थ हो पाते हैं। इसलिए इन्द्रियाँ दो प्रकार की हैं–ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्म इन्द्रियाँ। चक्षु, श्रोत, घ्राण, रसना व त्वक्– ये पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं तो वाक, पाणि, पाद, पायु और उपस्थ– ये पाँच कर्मेन्द्रियाँ हैं। मन उभय इन्द्रिय है। ये इन्द्रियाँ अत्यन्त सूक्ष्म होती हैं इसलिए दिखाई नही देतीं। शरीर में जिन्हे हम आँख, कान आदि इन्द्रियाँ समझते हैं, वास्तव में वे उन इन्द्रियों के निवास स्थल हैं, इन्द्रियाँ नही हैं। इन्द्रियाँ तो एक प्रकार की सूक्ष्म शक्तियाँ हैं। इन इन्द्रियों में अपने–2 विषयों को ग्रहण करने व कर्म करने की सामर्थ्य (क्षमताएँ) भरी पड़ी हैं। ये क्षमताएँ जितनी जाग्रत होती हैं व्यक्ति उतना ही सबल सक्षम और शक्तिशाली होता है और इनके क्षमताओं के कम पड़ जाने से वह दुर्बल व असहाय होता जाता है। सामान्यतः इन्द्रियों की क्षमताओं की एक सीमा होती है और यह सीमा ही हमें ससीम बनाती है किन्तु भारतीय तत्वदर्शियों ने अपने योग साधना के बल पर यह पाया कि इन्द्रियों की क्षमताओ का विकास उच्च सीमा तक किया जा सकता है–ससीम से असीम की ओर प्रस्थान किया जा सकता है। दूसरे शब्दों में इन्द्रिय सीमाओं से परे का ज्ञान व कर्म सम्पादन सम्भव है। वर्तमान के अलावा भूत और भविष्य का ज्ञान भी प्राप्त किया जा सकता है। अपने हर संकल्प की पूर्ति सम्भव बनायी जा सकती है। योग की भाषा में इन क्षमताओं (शक्तियों) को विभूतियाँ, सिद्धियाँ कहा गया है। आज का विज्ञान भी अतीन्द्रिय क्षमताओं पर विश्वास करने लगा है।

शोध आलेख

अपरिमित सम्भावनाओं का आगार है मानवीय व्यक्तित्व जिसका आधार है मन। मन में अपरिमेय शाक्तियाँ प्रसुप्त एवं कुछ जाग्रत रुप मे विद्यमान होती हैं जो मनुष्य के शरीर एवं वाह्य संसार पर शासन करती हैं। मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण में भी मन को अत्यन्त शक्तिशाली माना गया है। पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक फ्रायड ने भी मन एवं मानसिक शक्तियों कों अति महत्वपूर्ण बताया है, उन्होने यह भी बताया की शारीरिक स्वास्थ्य के लिए मानसिक शक्तियों, विशेष कर संकेत, सम्मोहन आदि उपायों का उपयोग किया जा सकता है।[2] विशिष्ट मानसिक क्षमताओ के जागरण एवं उपयोग से सम्बन्धित विषयों पर पाश्चात्य विद्वानों जैसे ग्योफ्रे होडसन एवं लीड बीकर आदि ने सारगर्मित पुस्तके भी लिखी हैं, जैसे– 1. Clair Voyant Research and the life after death

2. Clairvoyance

भारतीय प्रज्ञा ने मन की इन शक्तियों को सदियों पूर्व जाना और अनुभव कर लिया था। हमारे ऋषियों–महर्षियों ने हजारो वर्ष पूर्व ही इन्द्रियों से परे की अतीन्द्रिय क्षमताओ को न सिर्फ जाना और

पहचाना था बल्कि उसे योगज प्रत्यक्ष का नाम भी दे दिया था। दूर स्थित वस्तु को देख लेना, सूक्ष्म–अति सुक्ष्म का ज्ञान प्राप्त कर लेना, दूर–श्रवण, परचित्त ज्ञान, त्रिकाल दर्शन, अतीत– भविष्य का ज्ञान, पूर्वजन्म ज्ञान, शरीर को छोटा–बड़ा बना लेने की सामर्थ्य आदि ऐसी अनेक अलौकिक क्षमताओं से हमारे पूर्वज ऋषि मुनि सम्पन्न थे। योग दर्शन में ऐसी अलौकिक क्षमताओं को विभूतियाँ एवं सिद्धियाँ कहा गया है। महर्षि पतंजलि के योग सूत्र का तीसरा अध्याय (तृतीय पाद) तो विभूतिपाद के रुप में इन्ही अतीन्द्रिय क्षमताओं–अलौकिक शक्तियो के लिए समर्पित है। ये शक्तियाँ योगाभ्यासी को योग साधना के क्रम में विभिन्न विषयों पर संयम (धारणा, ध्यान, समाधि) करने से प्राप्त होती हैं।
प्रायः सभी भारतीय योग साधनाओं में योग साधक को साधना से अनेक अतीन्द्रिय क्षमताओं एवं अलौकिक शक्तियों के करतलगत् होने की बात कही गई है जिन्हे ऐश्वर्य, विभूतियाँ सिद्धियाँ आदि अनेक नामों से पुकारा गया है। योग साधना से चित्त के शुद्ध–निर्मल होने पर शरीर और इन्द्रियों आदि मे अभूतपूर्व परिवर्तन होकर विलक्षण शक्तियों का आ जाना ही सिद्धि है।

सिद्धि की अवस्था में जो शक्ति पहले नही थी, वह आ जाती है। सिद्धियों के प्रादुर्भाव से योग साधक 'सिद्ध' हो जाता है। अब वह सामान्य व्यक्ति न होकर असामान्य बन जाता है। वह शरीर मन–बुद्धि आदि में अलौकिक सामर्थ्य से युक्त हो जाता है जिससे वह अपनी इच्छानुसार शरीर को छोटा या बड़ा, हल्का या भारी कर सकने मे समर्थ हो जाता है। वह इन्द्रिय–सीमाओं से परे जाकर दूर श्रवण, दूर दर्शन, त्रिकाल ज्ञान आदि प्राप्त करने मे समर्थ हो जाता है। उसकी यह सामर्थ्य ही उसकी 'सिद्धि' कहलाती है। योग साधना से प्रादुर्भूत होने के कारण इन सिद्धियों को यौगिक सिद्धियाँ कहते हैं।

साधना से सिद्धि का सिद्धान्त प्रायः सभी योग साधनाओं को स्वीकार्य है। साधना का अर्थ होता है– साध लेना, ठीक कर लेना, नियन्त्रित व्यवस्थित कर लेना, अपने अनुकूल बना लेना। पं0 श्री राम शर्मा आचार्य जी के अनुसार साधना से सिद्धि का सिद्धान्त पूर्णतः वैज्ञानिक है। जिस प्रकार सर्कस मे हाथी शेर भालू आदि खूँखार और हिंसक जानवरों को रिंग मास्टर साधकर उनसे अपने मनोनुकूल काम कराता रहता है, उसी प्रकार मनुष्य भी जब अपने शरीर, मन, बुद्धि, इन्द्रिय, प्राण आदि को अनुशासित कर उन्हे साध लेता है– अपने नियन्त्रण में कर लेता है तब ये उसके लिए अनेकों प्रकार से लाभकारी हो, सामान्य से असामान्य कार्य करने में समर्थ हो जाते हैं। इनके अन्दर विलक्षण शक्तियों का प्रादुर्भाव हो जाता है जो सिद्धियॉ कहलाती है।[3]
अपरिमित सम्भावनाओ के आगार इस मानवी व्यक्तित्व में अनन्त शक्तियाँ सूक्ष्म रुप में विद्यमान होती हैं जो अविद्या आदि क्लेशों के आवरण से आच्छादित हो सुषुप्त पड़ी रहती हैं। योग साधना करने से योग साधक (योगी) जैसे–2 इन क्लेश रुपी आवरणों से मुक्त होता जाता है, वैसे–2 अनेक रहस्यमय शक्तियाँ उसके अन्दर जाग्रत होती जाती हैं। इन विशिष्ट शक्तियों को यौगिक सम्पदा, ऐश्वर्य, विभूति, वैभव, ऋद्धि, सिद्धि, निधि, आदि कहा गया है। इन शक्तियों के जागरण से योगी को अदृश्य सूक्ष्म जगत दृश्यवत् हो जाता है, उसे दूर दर्शन, दूर श्रवण की सिद्धि उपलब्ध हो जाती। ध्यान मात्र से योगी भूत, भविष्य, वर्तमान तथा प्राणियों के मन के भाव जान लेता है–

कराकमलवद्विश्वं तेन योगी प्रयश्यन्ति,
दूरतो दर्शनं दूर श्रवणं चापि जायते।
भूत भव्यं भविष्यं च वेत्ति सर्वकारणम्,
ध्यान मात्रेण सर्वेषां भूतानां च मनोगतम्।।[4]

महर्षि पतंजलि ने योगसूत्र में इस प्रकार की अनेक विभूतियों–सिद्धियों का वर्णन किया है जैसे– **भूत और भविष्य का ज्ञानः**–महर्षि पतंजलि के अनुसार परिणाम त्रय में संयम करने से योगी को भूत (अतीत) और भविष्य (अनागत) का ज्ञान हो जाता है– **'परिणामत्रय संयमात् अतीतानागत् ज्ञानम्'**[5]
परिणाम का अर्थ है परिवर्तन। यह तीन तरह का है–धर्म परिणाम, लक्षण परिणाम और अवस्था परिणाम–
'एतेन भूतेन्द्रियेषु धर्म लक्षणावस्थापरिणामा व्याख्याताः'[6]
धर्म परिणाम में पदार्थ के धर्म का परिवर्तन होता है। जैसे चित्त का व्युत्थान धर्म से निरोध धर्म को ग्रहण कर लेना या मिट्टी का घड़ा बन जाना–
'तत्र व्युत्थाननिरोधयोधर्मयोरभिभवप्रादुर्भावौ धर्मिणि धर्म परिणामः'[7]

लक्षण परिणामः– तीन काल (भूत, वर्तमान, भविष्य) का नाम लक्षण है। काल भेद से जो भिन्नता हम समझते हैं वह लक्षण परिणाम है। लक्षण परिणाम धर्म परिणाम के साथ–2 हो जाता है। वर्तमान धर्म का लुप्त (अतीत) हो जाना उसका अतीत लक्षण परिणाम है तथा नये धर्म का प्रकट हो जाना वर्तमान लक्षण परिणाम। धर्म के वर्तमान लक्षण से युक्त रहते हुए भी उसकी अवस्था बदलती रहती है यही अवस्था परिणाम है। जैसे–बालक का युवा हो जाना, युवक का वृद्ध होना, नूतन का पुरातन हो जाना, शरीर की कोशिकाओं मे निरन्तर परिवर्तन होना अवस्था परिणाम है।

महर्षि पतंजलि कहते हैं कि इन तीनो परिणामों में संयम करने से अतीत तथा अनागत् विषय का ज्ञान होता है। यहाँ संयम से पतंजलि का तात्पर्य धारणा, ध्यान, समाधि से है–
'तदेतद् धारणाध्यानसमाधि त्रयम् एकत्र संयमः।'[8]

इन तीनो परिणामो के संयम करने का तात्पर्य यह है कि योगी जिस वर्तमान वस्तु के विषय में वह जानना चाहे कि पहले कैसी थी? उसका अतीत क्या था? वह वर्तमान स्वरुप मे किस प्रकार परिवर्तित होते हुए आई? और भविष्य में वह कब, कैसे, कहाँ, किस प्रकार पहुँचेगी (भविष्य का ज्ञान)? इन सबका यानि अतीत, वर्तमान और भविष्य का ज्ञान योगी को उक्त तीनो परिणामों में धारणा, ध्यान, समाधि रुपी संयम कर लेने से हो जाता है।

योग साधना से समाधि की उच्च अवस्था में पहुँचा योगी त्रिकालदर्शी हो जाता है। इस सिद्धान्त की पुष्टि यद्यपि सभी भारतीय योग परम्पराए करती हैं किन्तु अब तो विज्ञान एंव पाश्चात्य विद्वान भी 'दूरदृष्टि' (Clairvoyance) आदि के रुप में अतीन्द्रिय क्षमताओं को स्वीकार करने लगे हैं। जैसा कि श्री लीडबीटर जैसे पाश्चात्य विद्वानों ने उसे साधारण भौतिक दृष्टि से परे की वस्तु को देखने की शक्ति के रुप में परिभाषित की है– इसका वैज्ञानिक विश्लेषण करते हुए इसके सिद्धान्त को वायु तरंगों पर अवलम्बित किया है। उनके अनुसार आकाश को प्रभावित करने वाली तरंगों में से एक–2 अत्यन्त छोटे विभाग के प्रति ही मानवीय दृष्टि प्रतिक्रिया करने में समर्थ होती है और ये विशेष किरणें हमारे अन्दर प्रकाश उत्पन्न करती हैं। इसी प्रकार हमारे कान भी इन तरंगों के बहुत छोटे अंश को ही सुनने में समर्थ होते हैं। कान की पकड़ में आने वाली ध्वनि तरंगो के अतिरिक्त तरंगों का बहुत बड़ा क्षेत्र सुनाई नही देता। वह हमारी श्रव्य क्षेत्र से परे, अश्रव्य एवं अदृश्य (अज्ञात) रहता है। यह दृश्य श्रव्य शक्ति सभी में एक समान नहीं होती। इस शक्ति में वैयक्तिक कारणों से भी अन्तर हो सकते हैं। कोई व्यक्ति अधिक सूक्ष्म तरंगों को ग्रहण कर पाते है तो कोई अधिक सूक्ष्म तरंगो को ही जान (प्रत्यक्ष कर) पाते हैं।

इस सन्दर्भ में डॉ0 लक्ष्मी शुक्ला स्पष्ट करती हैं कि हमारे स्थूल शरीर के परे सूक्ष्म व कारण शरीर भी होते हैं जिन्हे कि समय की प्रक्रिया में सक्रिय बनाया जा सकता है। ये भी पदार्थो की तरंगों के प्रति प्रतिक्रिया करते हैं और उनका इस प्रतिक्रिया का स्तर भी भिन्न होता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि हमारी इन्द्रियों की शक्ति का विस्तार क्रमशः सम्भव है जिससे कि वे सामान्य से निम्नतर एवं उच्चतर स्तर की तरंगों को ग्रहण कर सकें। इन तरंगों का एक बड़ा भाग भौतिक स्तर का ही होता है और यह सूक्ष्म स्तर के संस्कारों को ग्रहण करता है। ये संस्कार नेत्र पटल के द्वारा ही ग्रहण होते हैं। दूसरी ओर भौतिक पदार्थो के प्रत्येक अणु–परमाणु के साथ अलौकिक अणु–परमाणु भी होते हैं और इनके सम्मिलन से निर्मित वस्तु को 'दूरद्रष्टा' (Claervoyant) देख सकता है।[9]

परचित्त ज्ञान एवं विचार सम्प्रेषणः– योग सिद्ध पुरुष दूसरों के मन की बात जान सकता है, साथ ही वह बिना कहे अपने विचारों को दूसरों के मन तक पहुँचा सकता है। योग का यह सिद्धान्त अनेक महापुरुषों के साधना के जीवन अनुभव से भी सिद्ध हुआ है। आज परामनोविज्ञान द्वारा 'टैली पैथी' को अपने शोध अध्ययन का विषय बनाना भी इस क्षेत्र की वैज्ञानिकता को सिद्ध करता है।

महर्षि पतंजलि कहते हैं कि जब योगी किसी के चेहरे नेत्र आदि की आकृति अथवा उसके मन के किसी भाव विशेष का अनुभव कर जब उसके चित्त की वृत्ति में संयम करता है तो उसको उस चित्त का साक्षात्कार हो जाता है जिससे योगी को यह ज्ञान हो जाता है कि वह चित्त कैसा है? उसमें क्या

विचार चल रहा है? वह क्या सोच रहा है? इस समय वह चित्त राग युक्त है, द्वेष युक्त है, सांसारिक विकारों वासनाओं से भरा है अथवा वैराग्य से पूर्ण है?

'प्रत्ययस्य परचित्त ज्ञानम्'[10]

यहाँ 'प्रत्यय' शब्द का अर्थ वित्तान–भिक्षु के अनुसार 'स्वचित्त' है जबकि अन्य विद्वानों ने इसका अर्थ 'परचित्त' किया है। वस्तुतः यहाँ पर प्रत्यय का तात्पर्य स्व एवं पर दोनो प्रकार के प्रत्ययों से है। जिसके चित्त का ज्ञान प्राप्त करना है, उसको परचित्त लक्ष्य में रखकर अपने चित्त (स्वचित्त) को शून्यवत् करने पर उसमे जो भाव उठते हैं वे ही पर चित्त के भाव होते हैं जिसके आधार पर 'परचित्त ज्ञान' हो जाता है। परचित्त का ज्ञान किसी–किसी पर–चित्तज्ञ को अनायास भी हो जाता है ऐसे उाहरण भी मिलते हैं। महर्षि पतंजलि के अनुसार योगी द्वारा परचित्त का आलम्बन किये जाने पर चित्त की उस वृत्ति का तो ज्ञान होता है किन्तु वृत्तियों के आलम्बन का ज्ञान नहीं होता–

'न च तत्सालम्बनं तस्य विषयीभूतत्त्वात्'[11]

क्योंकि उनमें अनेक आलम्बन निरपेक्ष चित्तकी अवस्थाएं होती हैं। आलम्बन ज्ञान के हेतु अन्य प्रकार के संयम की आवश्यकता होती है।

अन्य संयम जन्य अतीन्द्रिय क्षमताएँ (विभूतियाँ):–

मन की एकाग्रता सिद्ध हो जाने पर चित्त की शुद्धता और निर्मलता को प्राप्त योगी के अन्दर अनेकों प्रकार की अलौकिक–अतीन्द्रिय क्षमताएँ जागृत हो जाती हैं। वह जिस किसी विषय पर 'संयम' करता है उसी से सम्बन्धित ज्ञान एवं सिद्धि उसे प्राप्त हो जाती है।

किन–2 विषयो पर ''संयम' करने से किस–2 तरह की विभूतियाँ सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं, इन सब विषयों का महर्षि पतंजलि ने योग सूत्र के तृतीय अध्याय (पाद) विभूतिपाद मे विस्तृत वर्णन किया है। जैसे–जब योगी अपने शरीर के रुप में संयम कर लेता है तो वह अपने संकल्प मात्र से ग्राह्य शक्ति (दृश्यता) को अवरुद्ध कर सकता है जिससें उसे कोई देख नही सकता। इसे ही अन्तर्धान होना (छिप जाना) कहते हैं।

'कायरुप संयमातद् ग्राह्य शक्तिस्तम्भे
चक्षुः प्रकाश असम्प्रयोगे अन्तर्धानम्'।।[12]

शब्द अर्थ और ज्ञान के विभाग मे संयम करने से योगी को सभी प्राणियों के वाणी का ज्ञान हो जाता है।[13]

सोप क्रम और निरुप क्रम कर्मो मे संयम करने से योगी को मृत्यु का ज्ञान हो जाता है।[14]

मैत्री आदि में संयम करने से मैत्री आदि का बल लाभ होता है।[15] विभिन्न बलों में संयम करने से हाथी का बल इत्यादि प्राप्त होता है।[16] ज्योतिषमती प्रवृति पर संयम से अत्यन्त सूक्ष्म, छिपी हुई या अत्यन्त दूरस्थ वस्तुओं का ज्ञान योगी को हो जाता है।[17] सूर्य में संयम से समस्त लोकों (भुवन) का ज्ञान होता है।[18] चन्द्रमा में संयम से ताराओं (ग्रह–नक्षत्रो) की स्थिति विशेष का ज्ञान हो जाता है।[19] ध्रुवतारा में संयम से ताराओं की गति का ज्ञान हो जाता है।[20] नाभिचक्र में संयम से समस्त शारीरिक ज्ञान हो जाता है। कंठकूप में संयम से भूख–प्यास की निवृत्ति हो जाती है।[21] हृदय में संयम करने से चित्त के स्वरुप का ज्ञान होता है।[22] कूर्मनाड़ी में संयम से स्थैर्य,[23] मूर्ध ज्योति में संयम से सिद्ध दर्शन,[24] तथा स्वार्थ संयम से पर–पुरुष ज्ञान हो जाता है।[25] श्रोत (कान) और आकाश के सम्बन्ध में संयम करने से योगी दिव्य सूक्ष्म और दूरस्थ शब्दो को भी सुन सकता है। संस्कारों को साक्षात करने से योगी को पूर्व जन्म का ज्ञान हो जाता है– **'संस्कार साक्षात् करणात् पूर्वजाति ज्ञानम्।'**[26] इसी तरह अन्य प्रकार के संयम से योगी को अनेक प्रकार की अलौकिक क्षमताओ की प्राप्ति होती है जिसका वर्णन पतंजलि ने योगसूत्र मे किया है। पतंजलि कहते हैं कि योग साधना से जब प्रातिभ ज्ञान उत्पन्न हो जाता है तो योगी के लिए कुछ भी अज्ञात और अज्ञेय नहीं रहता, वह सब कुछ जान लेता है– **'प्रातिभात् वा सर्वम्।'**[27]

इस प्रकार स्पष्ट है कि व्यक्ति के अन्दर वह क्षमताएँ भरी पड़ी है जिसको प्रसुप्त से जागृत कर लेने पर वह न सिर्फ अपनी शारीरिक व ऐच्छिक क्षमताओं का विकास कर सकता है अपितु वह अनेक प्रकार की अलौकिक क्षमताओं से युक्त भी हो सकता है जो व्यक्तित्व के पूर्ण विकास की परिचायक भी है। यद्यपि ये क्षमताएँ लौकिक (सांसारिक) दृष्टिकोण से विभूतियाँ हैं किन्तु योग के लक्ष्य कैवल्य की दृष्टि से साधना के विघ्न भी हैं क्योंकि यदि योग साधक इन अलौकिक विभूतियों के जागरण एवं प्रयोग की लालसा में इनका प्रदर्शन करने लगा तो वह अपने कैवल्य के लक्ष्य मे भटक भी सकता है। ऐसे में

ये विभूतियाँ योगी के लिए साधना में विघ्न स्वरुप हैं अन्यथा यदि योगी विभूतियो व अतीन्द्रिय क्षमताओं के सदुपयोग से परहित, परोपकार, असहायों–असमर्थो व दीन–दुखियों की सेवा करके या योग साधकों को सहायता पहुँचाकर अपनी साधना में और तीव्रता लाता है तो ये अलौकिक क्षमताएँ उसके लिए सहयोगी भी सिद्ध होती हैं।

सन्दर्भ सूचीः–

1. सांख्य प्रवचन भाष्य–11.19
2. डा0 लक्ष्मी शुक्ला, भारतीय मनोविज्ञान ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली पृ0–297
3. पं0 श्रीरामशर्मा आचार्य वाङ्गमय– साधना से सिद्धि–8.1, अखण्डज्योति संस्थान, मथुरा।
4. पं0 श्रीरामशर्मा आचार्य वाङ्गमय–साधना से सिद्धि–8.5
5. योगसूत्र–3/16
6. योग सूत्र 3/13
7. व्या0 भाष्य 3/13
8. व्यास भाष्य–3/4
9. डा0 लक्ष्मी शुक्ला भारतीय मनोविज्ञान पृ0–301
10. योगसूत्र 3/19
11. योगसूत्र 3/20
12. योगसूत्र–3/21
13. योगसूत्र–3/17
14. योगसूत्र–3/22
15. योगसूत्र–3/23
16. योगसूत्र–3/24
17. योगसूत्र–3/25
18. योगसूत्र–3/26
19. योगसूत्र–3/27
20. योगसूत्र–3/28
21. योगसूत्र–3/30
22. योगसूत्र–3/34
23. योगसूत्र–3/31
24. योगसूत्र–3/32
25. योगसूत्र–3/35
26. योगसूत्र–3/18
27. योगसूत्र–3/33